इकाई 24 व्यापार तथा शहरीकरण का विस्तार

इकाई की रूपरेखा

24.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप समझ सकेंगे कि

- व्यापार की वस्तुओं का उत्पादन अथवा उनकी प्राप्ति किस प्रकार होती थी
- व्यापार कैसे चलता था
- उत्तरी भारत में व्यापार के मुख्य मार्ग कौन से थे
- विकसित होने वाले मुख्य शहरी केन्द्र कौन से थे
- भारत के अन्य देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्धों का स्वरूप क्या था
- समाज में व्यापारियों की स्थिति कैसी थी ?

24.1 प्रस्तावना

चौथे खण्ड में आपने पढ़ा कि उत्तर वैदिक काल में हुये विकास छठी शताब्दी ई. पूर्व में शहरों के विकास के रूप में किस प्रकार प्रतिफलित हुए। यह आरंभिक नगर गंगा अथवा इसकी मुख्य सहायक नदियों, जो कि संचार में प्रयोग की जाती थी, के तट पर स्थित थे। इनमें से अधिकतर राजनैतिक केन्द्र एवं आरंभिक राज्यों की राजधानी थे। इनमें से कुछ में मिट्टी के परकोटे एवं बांध होते थे। लेकिन सामान्यतः यह बस्तियाँ अनियोजित थीं। इन स्थलों की पुरातात्विक खुदाई बहुत कम हुई है तथा इस समय महलों के होने के प्रमाण नहीं मिल सके हैं। मौर्यकाल के समय में आकर ही जबकि राजधानी राजगृह से हटाकर पाटलीपुत्र बनायी गयी, स्मारकीय वास्तुकला के चिन्ह मिलने आरंभ होते हैं। इन आरंभिक विकासों की तुलना में शहरीकरण की प्रक्रिया उत्तर मगध काल में तीव्र हो गयी शहरों की संख्या बढी तथा अब इनमें राजनैतिक तथा व्यापारिक गतिविधियाँ एकीकृत हो गयी आवासीय घरों तथा किलेबंदी एवं सार्वजनिक इमारतों दोनों में ही ईंट का प्रयोग बड़े पैमाने पर होने लगा। इसी काल में ही भव्य धार्मिक स्मारक बनाए तथा अलंकृत किए गए।

इसी प्रकार प्रथम सहस्त्राब्दि ईसा पूर्व के मध्य से व्यापारिक गतिविधियां आरंभ हो गयी थी। यह व्यापार मुख्यतः नमक, धातु आदि जैसी आवश्यक वस्तुओं से संबंधित था। मौर्य काल में आरंभिक मार्गों का महत्व और बढ़ गया। इस विस्तार के दो कारण थे। दकन में खनन किये जाने वाले सोना, हीरा एवं मणि जिन्हें कि व्यापार मार्गों से ले जाया जाता था, राजकीय खजाने की आवश्यकता की पूर्ति करते थे राज्य व्यापारियों से कर वसूल करके राजस्व प्राप्त करता था तथा व्यापार को प्रोत्साहन देता था।

राज्य द्वारा अपनी सेना एवं प्रशासन तंत्र को वेतन भुगतान करने के लिए व्यापार एवं कृषि राजस्व वसूल करना आवश्यक था। हमें यह भी ज्ञात है कि व्यापार थल मार्गों तथा समुद्री मार्गों दोनों ही के द्वारा होता था, मौर्यकाल में, समुद्री व्यापार मुख्यतः तटवर्ती क्षेत्रों में होता था। पश्चिमी तटों के बन्दरगाह संभवतः नर्मदा के मुहाने पर भरूच तथा आधुनिक बम्बई के निकट सोपर थे। पूर्व में ताम्र लिपि अथवा आधुनिक तामलुक बर्मा की ओर जाने वाले जहाज़ो के लिए एक महत्वपूर्ण मार्ग था। आइए देखें कि इन जल एवं थल मार्गों का द्वितीय एवं प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व में किस प्रकार विस्तार हुआ।

24.2 भौगोलिक पृष्ठभूमि

इस इकाई में हम भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी भाग में होने वाली गतिविधियों का अध्ययन करेंगे इस उद्देश्य के लिए विभाजन रेखा विंध्य क्षेत्र होगी। अतः दकन इस इकाई के अध्ययन क्षेत्र से मुख्यतः बाहर होगा।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से कुछ भौगोलिक विशिष्टताएं अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी भाग के प्रधान नदी समूह सिंधु तथा गंगा है। गंगा नदी समूह सिंधु नदी समूह से बिल्कुल भिन्न है। उत्तर में बस्तियों की स्थिति तथा विकास पर भी इसका प्रभाव पड़ा है। हिमालय से निकल कर बंगाल की खाड़ी तक पहुंचने तक गंगा में कई सहायक नदियों का पानी मिलता है। यमुना, गोमती, घाघरा, गंडक आदि नदियों के गंगा में मिलने से इसमें इतना पानी बढ़ जाता है कि गर्मियों के महीनों में भी सिंचाई एवं कृषि के लिए इसमें पर्याप्त पानी होता है। दक्षिण पश्चिम मानसून से मुख्यतः मध्य एवं निचली गंगा घाटी में वर्षा होती है। तथा यह क्षेत्र एक बड़ी जनसंख्या के भरण पोषण की दृष्टि से काफी उपजाऊ है। केवल यही नहीं कि गंगा घाटी कृषि के लिए काफी उपजाऊ है। यह नदी नौ परिवहन के लिये उपयुक्त है। प्राचीन काल से गंगा से वस्तुओं एवं मनुष्यों का आवागमन होता रहा है तथा यह नदी उत्तर-पश्चिमी शहरों को निकटवर्ती तटों से जोड़ने वाली उत्तर की रक्षा-रेखा रही है।

इसके विपरीत सिधु घाटी में दक्षिण-पश्चिम मानसून से काफी कम वर्षा होती है इसकी मुख्य सहायक नदियां झेलम, चेनाब, रावी, सतलज तथा बेयास पंजाब में मिलती है जहाँ का क्षेत्र उपजाऊ है। किन्तु इसके अतिरिक्त अरब सागर तक सिंधु रेगिस्तान से होकर बहती है जिससे निरंतर इसका पानी कम होता जाता है। इसके कारण कृषि उत्पादन तथा नौ संचालन की दृष्टि से इस नदी की उपयोगिता काफी कम हो गयी।

एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य हिमालय के दरों की स्थिति है। यह दर्रे व्यापार की वस्तुएं भारत के अन्दर आने तथा भारत एवं मध्य एशिया के बीच सम्पर्क का महत्वपूर्ण माध्यम रहे हैं।

24.3 राजनैतिक ढांचा

उत्तरी भारत की राजनैतिक परिस्थिति की समीक्षा यहां आवश्यक है क्योंकि इसी इकाई में आगे चलकर हम एक ऐसे प्रश्न पर चर्चा करेंगे जिससे इस परिस्थिति का संबंध है व्यापार पर नियंत्रण किसका था? इसका नियंत्रण राजाओं एवं शासकों के हाथ में होता था अथवा व्यापारियों के हाथ में? आपको ज्ञात है कि मौर्य काल में मगध शक्ति का केंद्र बना हुआ था किन्तु मौर्य वंश के पतन के साथ ही मगध की प्रधानता समाप्त हो गयी और कई नए केंद्र विकसित हुए। गंगा घाटी, विशेषकर मगध पर ईसवी युग के आरंभ तक शुग एवं उसके बाद कण्वों का शासन बना रहा।

उत्तर-पश्चिम में भारत-यूनानी राजा थे जिनका इतिहास मुख्यतः उनके द्वारा जारी की गयी मुद्राओं से जाना जाता है। उनके शासन का अन्त मध्य एशिया के खानाबदोश जनजातियों द्वारा उन पर आक्रमण के साथ हुआ इनमें प्रथम आक्रमण पार्थियनों तथा शकों द्वारा तथा दूसरा यूह-ची जनजाति की ओर से हुआ। इन्होंने काबुल तथा कश्मीर पर अधिकार कर लिया तथा कुषाण राजाओं की परंपरा आरंभ की। सबसे महत्वपूर्ण कुषाण राजा कनिष्क था, यद्यपि उसके शासन का निश्चित काल अभी भी विवाद का विषय बना हुआ है। कुषाणों की राजधानी आधुनिक पेशावर के निकट पुरुषपुरा थी। मथुरा को लगभग दूसरी राजधानी का स्तर प्राप्त था। उनका राज्य पूर्व में वाराणसी तथा दक्षिण में सांची तक फैला हुआ था। कनिष्क के काल में मध्य एशिया तथा चीन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध बने तथा इन क्षेत्रों में स्थलमार्ग व्यापार को उन्नति मिली

उत्तर भारत में शक, पार्थव तथा कुषाण वंशों के अतिरिक्त भारी संख्या में स्थानीय शासक भी थे जो विभिन्न स्थानों पर शासन करते थे इनमें से पंजाब एवं राजस्थान के कई शासकों ने मुद्राए भी जारी की। द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व के अंतिम वर्षों तथा चौथी शताब्दी ईसवी के आरंभिक वर्षों के बीच लगभग 175 प्रकार की मुद्राएं प्राप्त हुई हैं। इसी प्रकार निचली गंगा घाटी तथा उड़ीसा तट के आसपास पुरी-कुषाण नाम से जानी जाने वाली मुद्राएं भारी संख्या में मिली है।

अत: हम कह सकते हैं कि उत्तर एवं उत्तर-पश्चिम भारत में कई बड़े एवं छोटे वंश शासन करते थे। परिणामत: स्थलमार्ग विभिन्न राज्यों से होकर निकलता होगा। संभवत: प्रत्येक शासक अपने केंद्रों पर वस्तुओं के विक्रय पर कर वसूलता होगा। व्यापारियों को सामान्यत: सुरक्षा प्रदान की जाती थी तथा व्यापार को बढ़ावा दिया जाता था।

24.4 व्यापार का विस्तार तथा वस्तुओं का उत्पादन

इस संदर्भ में एक प्रश्न यह उठता है कि उत्तर गुप्त काल में व्यापार गतिविधियों को बढ़ावा मिलने के क्या कारण थे? इस का उत्तर केवल एक नहीं हो सकता क्योंकि इसके कई कारण थे।

- कृषि से उत्पादन अब अतिरिक्त मात्रा में हो रहा था। इस कारण से सामाजिक वर्गों का जन्म हुआ जिन्हें विभिन्न प्रकार की वस्तुओं की आवश्यकता महसूस हुई जो कि केवल व्यापार द्वारा ही प्राप्त की जा सकती थी। कृषि उत्पादन अपने आप में व्यापार की वस्तु बन गए थे क्योंकि शहरों में रहने वाली जनसंख्या अपने लिए भोजन का उत्पादन नहीं करती थी।
- बौद्ध तथा जैन मत जिनके अब भारी संख्या में अनुयायी हो चुके थे, दोनों ही धन संग्रहण तथा निवेश को प्रोत्साहन देते थे तथा व्यापार अब उच्च स्तरीय व्यवसायों में गिना जाता था। अत: हम देखते हैं कि व्यापारियों तथा बौद्ध संघों के बीच निकट सम्बन्ध थे तथा व्यापार मार्गों के मुख्य स्थानों पर बौद्ध मठ बनाए गये थे।
- शहरी केन्द्रों के विकास का अर्थ था कि उपभोक्ता का एक ऐसा वर्ग उदयीमान था जिसे जीवन यापन तथा विलास की वस्तुओं की आवश्यकता थी।

इस आंतरिक कारणों के साथ-साथ विदेशों में भारतीय माल की मांग भी एक कारण थी। इस काल में उभरने वाले दो मुख्य साम्राज्य पश्चिम रोमन साम्राज्य तथा चीन में उत्तर हान साम्राज्य थे, रोमन साम्राज्य के अंतर्गत पूर्व के उत्पादनों जैसे मसाले, सुगन्धित लकड़ी आदि की काफी मांग थी। इसी प्रकार उत्तर हान साम्राज्य ने व्यापारियों को काफी प्रोत्साहन दिया जिसके कारण भारत, मध्य एशिया तथा चीन के बीच सम्पर्क बढ़ता गया। व्यापार मार्गों के वर्ग में हम चर्चा करेंगे कि देशीय व्यापार मार्ग विदेशी व्यापार तंत्र से किस प्रकार जुड़े किन्तु इस बिन्दु पर हम इस काल के हस्तकला उत्पादन के प्रमाणों का विश्लेषण करेंगे।

देश भर में बौद्ध स्थलों से भारी संख्या में अभिलेख प्राप्त हुए है। इन अभिलेखों में बौद्ध संघों को दिए जाने वाले अनुदानों तथा भेंटों का उल्लेख है। साथ ही इनमें कुछ व्यवसायों एवं व्यवसायिक वर्गों की संपन्नता का भी उल्लेख मिलता है।

अतएव मथुरा में मिले अभिलेखों में व्यापारियों की विभिन्न श्रेणियों जैसे वणिक, सर्थवाह, श्रेष्ठिन तथा विभिन्न व्यवसायों जैसे सुनार, जौहरी, कोषपाल, लौह व्यापार आदि का उल्लेख है। इसके अतिरिक्त इनमें शिल्पी संघ, जिसमें से एक को आटा बनाने वाले शिल्पी संघ के रूप में प्रमाणित किया है, का भी उल्लेख है। वस्तुकारों तथा शिल्पी संघ के विषय में जानकारी आरंभिक बौद्ध साहित्य तथा कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी मिलती है। एक कला के विशेषज्ञ समूहों के एक साथ किसी गांव में रहने के उल्लेख मिलते हैं। उदाहरण के लिए जातकों में काशी के एक सीमा स्थिति गांव का उल्लेख है जहां भारी संख्या में बढ़ई रहते थे तथा व्यापारी उक्त गांव व्यापार की दृष्टि से जाते रहते थे। माल प्राप्त करने का एक अन्य तरीका बन्दरगाहों का भ्रमण करना होता था। जब कोई जहाज बन्दरगाह पहुंचता था तो व्यापारी माल खरीदने के लिए वहां इकट्ठे हो जाते थे। बहुधा उन्हें जहाज़ के माल में अपना हिस्सा सुरक्षित करने के लिए पेशगी भी देनी पड़ती थी।

अर्थशास्त्र के अनुसार कुछ दस्तकार अपने सहयोगियों के साथ स्वतंत्र रूप से कार्य करते थे तथा अन्य शिल्पी संघ में संगठित थे। अभिलेखों में इन दस्तकारों द्वारा किए गए अनुदानों का उल्लेख मिलता है तथा पुरातात्विक खुदाई से इनकी कला के नमूने भी प्राप्त हुए। कपड़ा बनाना काफी महत्वपूर्ण दस्तकारी कला थी तथा सूती कपड़े भारत से निर्यात किए जाते थे। उत्तर में मथुरा

और वाराणसी सहित कपड़ा उत्पादन के कई केंद्र थे। मथुरा में एक अनुदान एक रंगरेज़ की पत्नी द्वारा किया गया था। दस्तकारों की अन्य श्रेणियों में जौहरी, इत्रसाज़ तथा लुहार थे। आरंभिक ऐतिहासिक स्थलों पर मनको तथा अन्य आभूषणों की प्राप्ति प्रचुर मात्रा में हुई है। हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं कि उत्तर में उज्जैन मनके बनाने का मुख्य केंद्र था। यहां मनके अर्ध बहुमूल्य पत्थरों, कांच, हाथी दांत तथा मिट्टी के बनाए जाते थे तथा उत्तर की ओर कई केंद्रों पर इनकी बड़ी मांग थी। सांची स्थित अभिलेखों पर हाथीदांत आकृतियों तथा हाथीदांत कर्म के उत्कृष्ट उदाहरण सौभाग्यवश सुरक्षित बचे हुए है। बेगराम अथवा अफगानिस्तान के प्राचीन कपिसा में हुई खुदाई में हाथीदांत गठित आकृतियां भारी संख्या में प्राप्त हुई हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस काल में व्यापार में विभिन्न प्रकार की वस्तुएं विद्यमान थी। इनमें विलास की वस्तुएं जैसे हाथीदांत की वस्तुएं, आभूषण, मनके, मोती, हीरे तथा अन्य बहुमूल्य पत्थर तथा सामान्य प्रयोग की वस्तुएं जैसे कपड़े, कृषि उत्पादन तथा लौह उपकरण आदि शामिल है। निस्संदेह इनमें से कई वस्तुएं निर्यात भी की जाती थी जिन पर अलग से चर्चा की जाएगी। व्यापार की एक अन्य वस्तु संभवतः शराब थी। अर्थशास्त्र में मद्य के उत्पादन पर विस्तार से चर्चा की गयी है। इसकी लोकप्रियता का प्रमाण इस काल की मूर्तिकला में विशेषकर संघोल एवं मथुरा में चित्रित मदपान दृश्यों से मिलते हैं।

24.4.1 देशीय व्यापार

एक ओर जहां मिलिंद पण्ह तथा जातक जैसे साहित्य स्रोतों से व्यापार तंत्र के संगठन के विषय में जानकारी मिलती है, इस विषय में अतिरिक्त प्रमाण पुरातात्विक शिल्प तथ्य जैसे मुद्राओं, मुहरों तथा मुद्रांकणों से प्राप्त हो जाते है मिलिंद पण्ह का रचनाकाल ईसवी युग के आरंभ के लगभग है। इसका मूलपाठ अब उपलब्ध नहीं है तथा जो पाठ उपलब्ध है वह मूलपाठ का पाली अनुवाद है जो कि श्री लंका में काफी पहले तैयार किया जा चुका था। पाली में ही रचित जातक कथाओं की संख्या पांच सौ है तथा इन कथाओं में बुद्ध के पूर्व जन्मों का उल्लेख मिलता है। साथ ही इनमें इस काल की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण भी मिलता है। बौद्ध स्मारकों की नक्काशी से हमें पता चलता है कि इनमें से कई कथाएं प्रथम-द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व में प्रचलित थी। जातको से हमें ज्ञात होता है कि व्यापारिक गतिविधियों के विभिन्न तरीके प्रचलित थे तथा वस्तुओं का मूल्य निश्चित करने की भी कई पद्धतियाँ थी। उदाहरण के लिए घोड़ों, हाथियों और मणिकों जिनका प्रयोग मुख्यतः शासक वर्ग करता था, के मूल्य का निर्धारण राजसभा में मौजूद एक मूल्यांकक करता था। श्रेष्ठतम् घोड़े पश्चिम एशिया तथा मध्य एशिया से आते थे। यह घोड़े विशिष्ट व्यापारियों द्वारा लाए एवं बेचे जाते थे। पूर्वकालीन पाली एवं संस्कृत ग्रंथों में इन व्यापारियों का उल्लेख अश्व व्यापारी के रूप में मिलता है। व्यापारी शिल्प संघों में संगठित होते थे। अन्य व्यापारी निजी धन से व्यापार चलाते थे। कुछ व्यापारी केवल वित्त निवेश करके व्यापारियों को धन उपलब्ध कराते थे। इन भिन्न व्यापारियों के लिए संबोधन भी भिन्न थे वणिक सामान्य व्यापारी होता था, सेठी धनदाता होता था तथा सार्थवाह सुदूर प्रदेश से माल लाने वाले कारवां का मुखिया होता था।

इन साहित्यिक उल्लेखों के अतिरिक्त मुहरों, मुद्रांकणों तथा मुद्राओं से मिलने वाले प्रमाण भी हैं मुहर एक छाप होती थी जिस पर उसके स्वामी का नाम अथवा कोई चिन्ह बना होता था जबकि किसी वस्तु पर इसकी छाप को मुद्रांकण कहा जाता था। मुहरे विभिन्न वस्तुओं जैसे पत्थर, हाथीदांत ताम्र, सीसा आदि की बनी होती थी तथा इनका प्रयोग पहचान तथा माल की सुरक्षा के लिए होता था। वस्तुओं की आपूर्ति के पहले माल को रस्सी से बांध दिया जाता था तथा गांठ के ऊपर गीली मिट्टी लगा कर उस पर मुहर लगा दी जाती थी। इसके बाद मिट्टी को धूप अथवा गर्मी पहुंचा कर सुखा दिया जाता था। उत्तर भारत में पुरातात्विक स्थलों पर इस प्रकार के मिट्टी पर मुद्रांकण तथा उनके पिछले भाग पर रस्सियों के निशान सहित भारी संख्या में मिले हैं।

व्यापारिक गतिविधियों का महत्वपूर्ण प्रमाण मुद्राओं के चलन से मिलता है। मौर्य काल में चांदी की अंकित मुद्राओं के साथ ढली हुई गैर अंकित ताम्र मुद्राओं का भी चलन था उत्तर मौर्य काल में मुद्राओं के प्रकार एवं संख्या में भारी बढ़ोत्तरी हुई। मुद्राओं पर अंकन आरंभ हुआ तथा इनकी ढलाई में काफी सुधार आया, ताम्र सिक्कों की ढुलाई के लिए लगभग 100 ईसा पूर्व पुराने सांचे विभिन्न स्थानों जैसे खोकराकोट (जिला रोहतक), सुनेत (जिला लुधियाना), तक्षशिला तथा सांची में हज़ारों की संख्या में प्राप्त हुए हैं। उत्तरी भारत के गण संघों तथा स्थानीय वंशों द्वारा लगभग 200 प्रकार के सिक्के जारी किए गए थे।

उत्तर-पश्चिम के भारतीय-युनानी राजाओं ने कई प्रकार की आकृति चित्रित सुन्दर मुद्राएं जारी कीं, जिनका भारत में कई शताब्दियों तक चलन बना रहा। चांदी तथा ताम्र की इन मुद्राओं पर

द्विभाषी अभिलेख अंकित होते थे। मुद्रा के एक ओर यूनानी भाषा एवं लिपि में तथा दूसरी ओर प्राकृत भाषा में सामान्यतः खारोष्ठी लिपि में अभिलेख अंकित होते थे पश्चिमी भारत में क्षत्रपों की मुद्राएं काफी महत्व रखती है क्योंकि इनमें शक युग के प्रयोग के आरंभिक चिन्ह मिलते हैं जिससे काल निर्धारण के लिए निश्चित आधार प्राप्त हो जाता है। आरंभिक ईसवी शताब्दियों की मुद्रा शृंखला का एक अन्य महत्वपूर्ण उदाहरण कुषाणों की मुद्राएं है, ताम्र के अतिरिक्त कुषाणों ने सोने की मुद्राएं भी ढाली जिन पर भारतीय, यूनानी तथा ईरानी देवताओं की विभिन्न आकृतियां अंकित है। मुद्राओं के प्रकार एवं व्यवस्था की यह बहुलता धन के विस्तृत स्तर पर इस्तेमाल का द्योतक है।

अर्थशास्त्र में वेतन मुद्रा के रूप में भुगतान किए जाने का उल्लेख है। जातक कथाओं में ज़मानत देकर माल खरीदने तथा व्यापारियों द्वारा ऋण पत्र देकर धन उधार लेने का उल्लेख है। हमें यह भी ज्ञात है कि शिल्पी संघ धरोहर के रूप में रखकर धन पर ब्याज देते थे, जिसका उल्लेख मथुरा के एक अभिलेख पर अंकित मिलता है। देशी मुद्राओं के साथ विदेशी सिक्के, विशेषकर रोमन सिक्के व्यापार के द्वारा भारत आए। उत्तरी भारत में कम संख्या में ही रोमन सिक्के प्राप्त हुए हैं यद्यपि मिटटी पर इन सिक्कों के नकल, जिसे "बुले" कहा जाता है, के नमूने खुदाई में प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुए हैं। इनमें से कई में धागा डालने के लिए फन्दे बने हुए हैं जिनसे अनुमान लगाया जा सकता है ये "बुले" संभवतः गहनों के रूप में प्रयोग किए जाते होंगे।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़ें और उनके आगे सही (√) अथवा गलत (×) का चिन्ह लगाएं।
   i) छठवीं शताब्दी ई.पूर्व के शहर प्रमुख नदियों के तटों पर स्थित थे
   ii) सिंधु नदी समूह में जल स्रोत गंगा की अपेक्षा अधिक थे।
   iii) अर्थशास्त्र के अनुसार दस्तकार स्वतंत्र रूप से बिना किसी शिल्पी संघ में संगठित हुए कार्य करते थे।
   iv) मुद्रा व्यवस्था व्यापार गतिविधियों की उत्तम सूचक है।

2) उत्तर मगध युग में व्यापार में बढ़ोत्तरी का उल्लेख आप किस प्रकार करेंगे। सौ शब्दों में लिखें।

....
....
....
....
....
....

3) आरंभिक ऐतिहासिक युग में गंगा घाटी के महत्व पर पांच पंक्तियां लिखें

....
....
....
....
....

24.4.2 विदेशी व्यापार

हम उल्लेख कर चुके हैं कि समुद्री व्यापार मौर्य युग में आरंभ हो गया था। आरंभिक संपर्क ईस्वी युग की आरंभिक शताब्दी में पनपा और विस्तृत हुआ। इसका एक कारण ईसवी युग के आरंभ में

1. इण्डो-ग्रीक सिक्के

उदित होने वाले दो साम्राज्यों की ओर से बढ़ने वाली मांग थी। यह साम्राज्य पश्चिम में शक्तिशाली रोमन साम्राज्य तक पूर्व की ओर चीन में हान साम्राज्य थे। फलतः इस युग की जानकारी कई विदेशी स्रोतों से प्राप्त होती है।

आरंभिक समुद्री व्यापार के संबंध में विस्तृत जानकारी हमें "लाल सागर परिभ्रमण" के विषय में लिखित श्रेष्ठ ग्रंथ (Periplus of the Erythrean Sea) से मिलती है। यह यूनानी कृति प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व में किसी अज्ञात नाविक द्वारा लिखी गयी थी जिसमें लाल सागर तथा भारत के बीच उसके द्वारा भ्रमण किए गए बंदरगाहों का विवरण है। इस कृति से हमें इन बन्दरगाहों पर उपलब्ध व्यापार की वस्तुओं की भी जानकारी मिलती है।

उत्तरी भारत के केंद्रों से भेजी जाने वाली वस्तुओं के लिए दो मुख्य बन्दरगाह सिंधु नदी के मुहाने पर बर्बापी कोन तथा नर्मदा के मुहाने पर भरूच थे। हमने पीछे सिंधु के समानांतर बर्बारीकोन को पंजाब एवं गाधांर से जोड़ने वाले मार्गों का उल्लेख किया है। भरूच जिसे यूनानी बारीगाज़ा कहते थे, उज्जैन, मथुरा तथा गंगा घाटी से जुड़ा हुआ था पूर्व में आंध्र एवं तमिल तटों के साथ समुद्री व्यापार के लिए तामलुक एक महत्वपूर्ण मार्ग था।

उपरोक्त यूनानी ग्रंथ से हमें पता चलता है कि उत्तर में आयात की जाने वाली वस्तुएं ज़री, मूंगा, लोबान, कांच के बर्तन, मुद्राएं तथा कुछ शराब हुआ करती थीं। रोमन कांच के उत्पादनों में तकनीकी सुधार के लिए विख्यात थे परिणामतः उनके द्वारा उत्पादित कांच को विभिन्न प्रकार की वस्तुएं भारत और चीन सहित कई देशों में काफी मूल्यवान समझी जाती थीं। लोबान अरब के एक स्थानीय वृक्ष से निकलने वाला गोंद होता है। इसका प्रयोग सुगंध तथा दवाओं के लिए होता था। अभी तक उत्तरी भारत में चांदी और सोने के रोमन सिक्के काफी कम संख्या में मिले है, यद्यपि आप अगले खण्ड में पढ़ेंगे कि भारतीय प्रायद्वीप में यह भारी संख्या में प्राप्त हुए हैं। इसके कारण कई विद्वानों ने अनुमान लगाया है कि कुषाणों एवं क्षत्रपों ने इन आयातित सिक्कों को पिघला कर अपनी मुद्राएं बनाने के लिए इन्हें पुनः प्रयोग किया होगा।

इसके बदले में भारत मसाले, फीरोज़ा, लाजर्वद, अकीक जैसे पत्थर, चीनी सिल्क और सूत आदि निर्यात करता था। इससे यह परिणाम नहीं निकालना चाहिए कि व्यापार पर केवल रोमन नियंत्रण ही था। इस व्यापार में अरब, यहूदी, पूर्व देशी यूनानी, मिस्त्र वासी रोमन आदि भी सम्मिलित थे। इसके अतिरिक्त भारतीय नाविक अपने पोतों में लाल सागर के बन्दरगाहों की ओर जाकर व्यापार करते थे जातक कथाओं में भारतीय व्यापारियों के ऐसे कई वृतांत मिलते हैं जिनसे वे धन कमाने के लिए लम्बी समुद्री यात्राएं करते हैं इसकी पुष्टि कौटिल्य के अर्थशास्त्र तथा अभिलेखों के विवरणों से हो जाती है। बौद्ध मठों के अनुदानकर्ताओं में एक महत्वपूर्ण श्रेणी नाविक हैं।

माल की एक श्रेणी जिस पर चर्चा आवश्यक है वह चीनीं सिल्क तथा सूत है। चीनी सिल्क सीध भेजे जाने के बजाय भारत के माध्यम से क्यों भेजा जाता था? इसका कारण राजनैतिक परिस्थिति थी। भारतीय उपमहाद्वीप की उत्तर पश्चिमी सीमा के समानांतर पार्थव शक्तिशाली शासक थे। उनके और रोमन साम्राज्य के बीच शत्रुता निरंतर बनी हुई थी। फलतः चीन तथा पश्चिम के बीच थल मार्ग निरंतर अवरूद्ध रहा। इसीलिए चीन के अधिकतर उत्पादन भारत के थल मार्गों से व्यापार किए जाते थे।

भारत, मध्य एशिया तथा चीन के बीच सम्पर्कों के विषय में जानकारी इस काल में लिखे गए चीन के इतिहास में मिलती है। सामान्यतः यह माना जाता है कि व्यापारियों के साथ बौद्धमत चीन तथा मध्य एशिया में प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व तथा प्रथम शताब्दी ईसवी के आस-पास फैला। प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व के बाद से मध्य एशिया की ओर जाने वाले उत्तरी मार्ग के समानांतर बौद्ध गुफाओं की एक पूरी श्रृंखला बनाई जाने लगी तथा तीसरी शताब्दी ईसवी से कई बौद्ध ग्रंथ चीनी भाषा में अनुवाद किए जाने लगे।

हमने अभी तक दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों जैसे बर्मा, थाईलैंड तथा इंडोनेशिया के साथ आरंभिक व्यापार संपर्क के विषय में बहुत कम चर्चा की है। इसका कारण यह है कि रोमन तथा चीनी साम्राज्यों की तुलना में इन देशों के आरंभिक ग्रंथ उपलब्ध नहीं हैं। अतः हमारी जानकारी का एक मात्र स्त्रोत पुरातात्विक खुदाई से प्राप्त वस्तुएं हैं। इनसे पता चलता है कि भारतीय दस्तकारों के विभिन्न उत्पादन जैसे मनके, अर्धबहुमूल्य पत्थरों की मुहरें, हाथीदांत की कंघियाँ

आदि दक्षिण-पूर्ण एशिया में इस काल में काफी मूल्यवान समझी जाती थीं। किन्तु लिखित प्रमाणों के अभाव में आरंभिक ईसवी शताब्दियों में व्यापार के संगठन से सम्बन्धित अधिक कुछ कहना संभव नही है।

24.4.3 मुख्य व्यापार मार्ग

उत्तरी अफ़गानिस्तान में आक्शस घाटी में बैक्ट्रिया मध्य एशिया एवं चीन के साथ अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का मुख्य केन्द्र था, इस नगर से एक मार्ग कपिस तथा काबुल घाटी से होता हुआ कुषाण साम्राज्य के मुख्य क्षेत्र को पहुंचता था। भारतीय उपमहाद्वीप में विभिन्न स्त्रोतों में दो मुख्य मार्ग होने के उल्लेख मिलते हैं। उत्तर पथ अथवा उत्तरी मार्ग उत्तरी क्षेत्र के मुख्य केन्द्रों को जोड़ता था तथा दक्षिण पथ अथवा दक्षिणी मार्ग प्रायद्विपीय भारत के केन्द्रों को जोड़ता था। उत्तर पथ पुष्कलावती अथवा आधुनिक चारसाड से आरंभ होकर तक्षशिला, मथुरा, कोशाम्बी तथा वाराणसी से पाटलीपुत्र होता हुआ चम्पा तथा चन्द्रकेतु गढ़ पहुंचता था। यह प्राचीन मार्ग मौर्य युग में मौजूद था तथा इसका उल्लेख यूनानी कृतियों में मिलता है। मथुरा से एक अन्य मार्ग पश्चिम दिशा में सिंध की ओर जाता था। इसी मार्ग से ही घोड़े उत्तर की ओर लाए जाते थे। मथुरा उज्जैन तथा नर्मदा के मुहाने पर भरूच के बन्दरगाह से भी जुड़ा हुआ था। एक तीसरा मार्ग सिंधु नदी के समानांतर जाता था तथा तक्षशिला को नदी के मुहाने पर पाटल से जोड़ता था। यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि मुख्य मार्ग गंगा नदी के समानांतर चलता था। नदी से नाव द्वारा माल आने जाने के उल्लेख कई स्थानों पर मिलते हैं। इस मुख्य मार्ग से कई छोटे-छोटे मार्ग जुड़े हुए थे जिनमें से एक मार्ग वैशाली तथा श्रावस्ती होता हुआ नेपाल पहुंचता था

24.4.4 शहरी केन्द्र

उत्तरी भारत के शहरी केन्द्रों के विषय में जानकारी हमें आरंभिक पाली एवं संस्कृत ग्रंथों से मिलती है। किन्तु इनमें से कई विवरण काफी सामान्य स्वरूप के हैं। इस उद्देश्य के लिए सबसे उत्तम स्त्रोत मुख्य शहरी स्थलों की पुरातात्विक खुदाई से प्राप्त होते हैं। इनसे हमें घरों की बनावट, तथा यहां के निवासियों द्वारा प्रयोग किए जाने वाले उपकरणों एवं अन्य शिल्प तथ्यों के विषय में विस्तृत जानकारी मिलती है। तक्षशिला (आधुनिक इस्लामाबाद से 30 किलो मीटर उत्तर-पश्चिम में) की खुदाई कई दशक पहले सर जॉन मार्शल ने करवाई थी। खुदाई 1913 में आरंभ हुई और लगभग बीस वर्षों तक चलती रही। इस खुदाई से पता चला कि तक्षशिला में कम से कम मौर्य काल से लोग निवास कर रहे थे। यद्यपि यहां प्रथम योजनाबद्ध शहर भारतीय-यूनानियों के काल में विकसित हुआ। शहर की किले बन्दी बाद में की गयी। किलेबंदी की दीवारें अन्य स्थानों पर भी पायी गयी हैं लेकिन वे सामान्यत: चिकनी मिट्टी और अच्छी तरह गुंथी मिट्टी की बनी हुई हैं। पक्की ईटों का प्रयोग आरंभ हो चुका था और विभिन्न इमारतों के लिए इनका इस्तेमाल किया जा रहा था। किन्तु गोलाकार इमारतें अर्धवृत्ताकार ईटों से बनाई जाती थीं।

मौर्य काल की अपेक्षा आरम्भिक ऐतिहासिक युग में घरों की सरंचना बेहतर होती थी तथा दीवारों के लिए पक्की ईट तथा छतों पर पक्की खपरैल का प्रयोग होता था। खुदाई के दौरान भौतिक संस्कृति के शिल्प तथ्यों से पता चलता है कि यह बस्तियां पूर्व कालीन बस्तियों की अपेक्षा अधिक संपन्न थीं। भारी मात्रा में मनको के मिलने से आभूषणों के विस्तृत प्रयोग की जानकारी मिलती है। चिकनी मिट्टी का प्रयोग कई तरीकों से होता था। इसे बर्तन बनाने के अतिरिक्त मानवीय तथा पशु की लघु मूर्तियां बनाने के काम में लाया जाता था। कुछ लघु मूर्तियां ढाली भी जाती थीं। जिनमें जटिल गढ़ाई तथा अलंकरण पाया गया है। एक और महत्वपूर्ण तथ्य शहरी केन्द्रों की संख्या में बढ़ोत्तरी है खुदाई से यमुना के किनारे पुराना किला, मथुरा तथा कोशाम्बी जैसे अनेक उदयीमान केन्द्र मिले हैं। अहिक्षत्र (जिला बरेली) उत्तरी पांचालों की राजधानी थी। वाराणासी में राजघाट इस युग में हाथीदांत तथा कपड़ा उत्पादन के केन्द्र के रूप में पाया गया है। वैशाली में, जिसे उत्तरी बिहार स्थित आधुनिक वैशाली माना गया है। भारी संख्या में मुहरे तथा मुद्रांकण मिले हैं जिनमें से कई व्यापारियों एवं दस्तकारों से सम्बन्धित हैं। बंगाल के दो मुख्य स्थान तामलुक तथा चन्द्रकेतुगढ़ थे। चन्द्रकेतु की खुदाई से पता चलता है कि यह स्थान आरंभिक ईसवी शताब्दियों में मिट्टी के प्रकारों से घिरा हुआ था जबकि तामलुक बन्दरगाही नगर था और यहां से गंगा के समानांतर मार्ग निकलता था। कुछ और पश्चिम की ओर उज्जैन का किलेबंद शहर था जो कि मनका उत्पादन के लिए भी विख्यात था। इसके अतिरिक्त यहां हुई खुदाई से विशाल ईट की दीवारों तथा अन्य ढांचों के अवशेष मिले हैं।

प्राचीन भारत के व्यापार मार्ग

24.5 व्यापार में धर्म की भूमिका

हमने पीछे उल्लेख किया है कि बौद्ध मत व्यापारियों को प्रोत्साहन तथा बड़ी संख्या में व्यावसायिक समूहों को संरक्षण प्रदान करता था। इसके विषय में हमें जानकारी विभिन्न बौद्ध स्थलों पर मिले अभिलेखों से मिलती है। यह अभिलेख राजा तथा जनसंख्या के विभिन्न वर्गों द्वारा दिए गए अनुदानों के लेखा के रूप में हैं। हम यह भी जानते हैं कि इस युग में महत्वपूर्ण बौद्ध मठ व्यापार मार्गों के समानांतर बने हुए थे।

तक्षशिला के आस पास का क्षेत्र एक ऐसा केन्द्र था जहां कई बौद्ध मठ स्थित थे। इस क्षेत्र में गांधार कला के नाम जानी जाने वाली विशिष्ट कला कुषाणों के शासन में विकसित हुई। बौद्ध मत का एक अन्य शक्तिशाली केन्द्र मथुरा था जो कि कला की दृष्टि से भी उतना ही विख्यात था। बौद्ध मत तथा जैन मत दोनों को ही संरक्षण प्राप्त था। खुदाई से बौद्ध तथा जैन दोनों के मठों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। एक और महत्वपूर्ण बौद्ध केन्द्र आधुनिक भोपाल के निकट सांची था। दकन तथा उत्तर के विभिन्न केन्द्रों के व्यापारी सांची गए और वहां अनुदान दिया जिससे सम्बन्धित अभिलेख मार्गों के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। सांची में स्तूप निर्माण के लिए धन का मुख्य अंश उज्जैन वासियों ने वहन किया था। मध्य भारत में भी भरहुत में एक स्तूप था। यहां अनुदान दकन में नासिक के निवासियों तथा उत्तर में पाटलीपुत्र तथा वैशाली के निवासियों ने किया।

दान में मिले धन एवं भूमि के कारण मठों की सम्पन्नता बढ़ गयी तथा समाज में बौद्ध संघों की भूमिका में भी परिवर्तन आया। पांचवी शताब्दी ईसा पूर्व में बौद्ध मत आरंभ होने के समय बौद्ध भिक्षु बहुत साधारण जीवन व्यतीत करते थे। बौद्ध मत के फैलाव एवं प्रसार तथा प्रभाव के बढ़ने से बौद्ध सम्प्रदाय के विशिष्ट समूह एवं शिक्षक काफी धनवान हो गए इस प्रकार कुषाणों के युग में कुछ बौद्ध मठों के पास काफी धन एवं भूमि हो गयी। ऐसे भी कई उल्लेख मिलते हैं जब बौद्ध भिक्षुओं एवं संघनियों ने स्वयं धन दान किया।

बौद्ध संघों में विभाजन का एक कारण कुछ नियमों की व्याख्या को लेकर खड़ा हुआ विवाद भी था। यह विवाद निरंतर बना रहा कि बौद्ध भिक्षु सम्पत्ति के स्वामी हो सकते हैं अथवा नहीं। एक अन्य प्रश्न बुद्ध को भगवान मानने एवं उनकी मूर्ति की पूजा करने से संबंधित था। प्रथम शताब्दी ईसवी तक बौद्ध संघ दो सम्प्रदायों में बट गया जिन्हें महायान तथा हीनयान के नाम से जाना जाता है। इनमें हीनयान अधिक रूढ़िवादी सम्प्रदाय था। लेकिन हमारे उद्देश्य के लिए अधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि बुद्ध की मूर्ति की पूजा के आरंभ होने से बौद्ध मत के कर्मकांडों में बढ़ोत्तरी हुई। अब मठों को दीप जलाने के लिए तेल, सुगन्ध के लिए लोबान तथा स्तूप सजाने के लिये सिल्क की पट्टियों की आवश्यकता हुई। भिक्षु के मठों में स्थायी रूप से रहने के साथ ही उन्हें वस्त्रों की भी आवश्यकता हुई। अब उनके पास धन एवं भूमि थी तथा वे अपने भोजन एवं अन्य आवश्यकताओं के लिए भिक्षा पर निर्भर नहीं रह गए थे। इस प्रकार वे इस युग में व्यापार की जाने वाली कई वस्तुओं के प्रमुख उपभोक्ता बन गए।

अभी तक हमने बौद्ध एवं जैन मत के संबन्ध में चर्चा की ब्राहमणवाद अथवा हिन्दू धर्म की इस संदर्भ में क्या भूमिका रही? अभिलेखों में ब्राह्मणों को भोजन कराने तथा वैदिक यज्ञों के लिए धन देने का उल्लेख मिलता है। कुषाणों के काल से संबंधित शिव एवं विष्णु की प्रतिमाएं भी प्राप्त हुई हैं। किन्तु ब्राहमणिक मन्दिरों की संरचना एवं स्वरूप का विकास मुख्यतः गुप्त काल से आरंभ होता है तथा समाज की विभिन्न गतिविधियों के केन्द्र के रूप में मन्दिर इस युग के बाद उभरे।

24.6 व्यापारियों की स्थिति

आरंभिक ईसवी शताब्दियों में संस्कृत में रचित ब्राहमणिक ग्रंथों में समाज को चार वर्गों : ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र में बांटा गया है। कृषि तथा व्यापार को सामान्यतः वैश्यों की गतिविधियां माना गया है। इसके विपरीत आरंभिक बौद्ध ग्रंथ समाज के विभाजन के विभिन्न तरीकों का उल्लेख करते हैं। इनमें वर्ण व्यवस्था के अतिरिक्त कार्य एवं शिल्प के आधार पर सामाजिक विभाजन का उल्लेख है। इन ग्रंथों में विभाजन उच्च एवं निम्न पर आधारित है। कृषि, व्यापार, पशुपालन आदि उच्च कार्यों में गिने जाते थे। इस प्रकार अनेक बौद्ध ग्रंथों में अच्छे परिवारों के नवयुवक सदैव कृषि, व्यापार तथा पशुपालन से जुड़े उल्लेखित मिलते है। इसी प्रकार शिल्प के अंतर्गत लेखा-जोखा तथा लेखन उच्च कार्यों में सम्मिलित हैं जबकि चर्मकारी,

टोकरियां बनाना, बुनाई आदि निम्न कार्य माने गए हैं मोटे तौर पर बौद्ध समाज में व्यवसाय पहचान का आधार थे तथा व्यापारियों को समाज में उच्च स्थान प्राप्त था।

इसका उल्लेख अभिलेखों में भी मिलता है। बौद्ध मठों में अनुदानकर्ता केवल अपने व्यवसायों का उल्लेख करते थे। उनकी जाति का उल्लेख कहीं भी नहीं मिलता। व्यापारी समाज में काफी महत्वपूर्ण स्थान रखते थे तथा शिल्पी संघ अनेक निजी अधिकार के अधीन होते थे।

बोध प्रश्न 2

1) यूनानी कृति "लाल सागर परिभ्रमण" के अनुसार कौन सी वस्तुएं भारत में आयात तथा कौन सी वस्तुएं भारत से निर्यात की जाती थीं।

....

....

....

....

....

2) चीनीं माल का व्यापार यूरोप में भारतीय माध्यम से क्यों किया जाता था? पाच पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

....

3) निम्नलिखित वक्तव्यों को पढ़ें तथा सही (√) अथवा (×) का निशान लगाएं:

   i) हमारे पास भारत के चीन तथा रोमन साम्राज्यों के साथ व्यापार के लिखित प्रमाण नहीं हैं।

   ii) भारी मात्रा में अनुदान पाने के फलस्वरूप बौद्ध भिक्षुओं की जीवन शैली में परिवर्तन आया।

   iii) पूर्वकालीन ऐतिहासिक युग में उत्तर पथ तथा दक्षिण पथ नाम के दो मुख्य व्यापार मार्ग थे।

   iv) बौद्ध ग्रंथों की तुलना में ब्राहमणिक ग्रंथों में व्यापारियों की सामाजिक स्थिति भिन्न आंकी गयी है।

24.7 सारांश

संक्षिप्त रूप में 200 ईसा पूर्व से 300 ईसवीं तक का काल व्यापार तंत्र के विस्तार तथा शहरों की संख्या में बढ़ोत्तरी की दृष्टि से अत्यधिक सम्पन्न काल माना जा सकता है। उत्तर भारत के मुख्य मार्ग उत्तर-पश्चिम के केन्द्रों को बंगाल के तट के समानांतर बन्दरगाहों से जोड़ते थे। इससे जुड़े हुए कई सहायक मार्ग थे तथा दक्षिण मार्ग था जो कि दक्षिण भारत तथा दकन तक जाता था। शहरी केन्द्रों के अतिरिक्त बौद्ध मठ भी इन्हीं मार्गों पर समानांतर स्थापित थे। इसका कारण इस युग में बौद्ध मत की सहायक के रूप में भूमिका थी। बौद्ध मत धन संग्रहण एवं व्यापार में धन निवेश को प्रोत्साहन देता था साथ ही संघों को अनुयायियों से धन एवं भूमि के रूप में अनुदान प्राप्त होने का भी लाभ होता था। इसी युग में विदेशी बाजारों, विशेषकर भूमध्य सागरीय क्षेत्र से भारतीय माल की मांग भी बढ़ी। मध्य एशिया तथा चीन के साथ व्यापार संपर्क के कारण बौद्ध मत के प्रसार का पथ प्रशस्त हुआ तथा इन व्यापार मार्गों के समानांतर चट्टानों को तराश कर अनेक बौद्ध मठ बनाए गए। दक्षिण पूर्व एशिया के साथ भी संपर्क बनाए जा रहे थे जिनके प्रमाण पुरातात्विक खुदाई से निरंतर मिल रहे हैं।

24.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) i) √ ii) × iii) × iv) √

2) आपके उत्तर में व्यापार को प्रोत्साहन देने में बौद्ध एवं जैन मतों की भूमिका, उदयीमान उपभोक्ता वर्ग, तथा विदेशी बाज़ारों, विशेषकर यूरोप एवं चीन के बाज़ारों में भारतीय माल की मांग का उल्लेख होना चाहिए। देखें भाग 24.4

3) गंगा घाटी कृषि के लिए उपजाऊ थी। यहां सिंचाई के लिए पानी पर्याप्त मात्रा में था तथा यह विभिन्न शहरों से जुड़ी हुई थी जिससे व्यापार में सुगमता होती थी। देखें भाग 24.2

बोध प्रश्न 2

1) देखें भाग 24.5

2) पार्थव तथा रोमन साम्राज्य की आपसी शत्रुता के कारण चीन एवं पश्चिम के बीच थल व्यापार मार्ग अवरूद्ध था। अतः चीन एवं पश्चिमी देशों के बीच व्यापार भारत के माध्यम से होता था। देखें भाग 24.5

3) i) × ii) √ iii) √ iv) √